KALA SOPAN MULTIDISCIPLINARY RESEARCH JOURNAL
(A Peer Reviewed Journal)
Volume 01, Issue 01, January 2024
©2024

दतिया की छतरियों में बुंदेली कला का अध्ययन

बृजेश पाल (शोधार्थी)

ललित कला संस्थान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी उ.प्र.

सार

कला का विकास मानव सभ्यता के साथ-साथ अनवरत चलता रहा है। प्राचीन काल से ही मनुष्य अपनी हृदय की भावनाओं को रंगों व रेखाओं के माध्यम से चित्रों के रूप में उन्हें साकार करता रहा है। इस प्रकार मानव जाति के इतिहास की पृष्ठभूमि में कलाओं का अपना विशिष्ट स्थान रहा है। चित्र मानवीय भावनाओं की सहज सशक्त अभिव्यक्ति का सुन्दर आधार है। यही कारण है कि मानव इतिहास के साथ ही चित्रकला का विकास अविछिन्न रूप से समृद्ध रहा है। चित्रकार रेखा और रंग के सहारे किसी आधारभूत सतह पर अन्तर्जगत और बाह्य जगत के उद्भूत भावों को साकार करता है। शिल्प शास्त्रों में चित्रकला को अन्य कलाओं में श्रेष्ठ माना गया है। भारत में भित्तिचित्रकला का प्रारम्भ जोगीमारा की गुफाओं से माना जाता है। इसके उपरान्त अजन्ता, बाघ, बादामी, सित्तनवासल आदि स्थानों पर भित्तिचित्रण किया गया। बुन्देलखण्ड में जहां मूर्तिकला, स्थापत्यकला एवं चित्रकला जैसी अनेक कला विधाओं का बहुमुखी विकास हुआ है। वहीं बुन्देलखण्ड में भित्ति चित्रकला का विकास कई स्थानों पर हुआ है जिनमें ओरछा व दतिया मुख्य रूप से भित्ति चित्रकला के संरक्षक माने जाते हैं।

बीज शब्द

बुन्देलखण्ड, छतरियाँ, दतिया, भित्तिचित्र, बुन्देला, राधा-कृष्ण, गोपियाँ, राम दरवार, शिव, चित्र शैली

इतिहास

बुन्देलखण्ड में दतिया का ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रहा है। पुराणों में दतिया का सम्बन्ध महाभारत के कुख्यात दैत्य दन्तवर्क से जोड़ा जाता है। माना जाता है कि इसी दैत्य के नाम पर इस नगर का नाम दतिया पड़ा। खंगार राजा को हरा कर बुन्देला शासक सोहनपाल ने गढ़कुण्डार को अपनी राजधानी बनाया और सोहनपाल के वंशज राजा रुद्रप्रताप ने सन् 1631 ई. में गढ़कुण्डार से अपनी राजधानी ओरछा में स्थानान्तरित कर दी। दतिया, ओरछा

और अन्य रियासतों पर रुद्रप्रताप का अधिकार था। रुद्रप्रताप के पश्चात मधुकर शाह राजा हुए जिन्होने अपनी कुशलता और साहस से ओरछा को समृद्धसाली बनाया। मधुकर शाह के पश्चात ओरछा के राजा रामशाह हुए और उनके बाद वीर सिंह जू देव ओरछा के महाराजा हुए।

दतिया का सांस्कृतिक इतिहास ओरछा के राजा वीर सिंह जू देव के पुत्र भगवान राव के साथ शुरू होता है। सन् 1628 ई. में भगवान राव ने दतिया की स्थापना की। सन् 1640 ई. में भगवान राव की मृत्यु हो गई। भगवान राव की मृत्यु के पश्चात शुभकरन राजा बने। शुभकरन मुगलों से युद्ध करते हुए सन् 1679 ई में मारे गए। शुभकरन की मृत्यु के पश्चात उसका बड़ा पुत्र दलपत राव दतिया का शासक बना। दलपत राव ने मुगलों का भरपूर सहयोग किया और मुगलों की ओर से युद्ध भी लड़े। दलपत राव के बाद रामचन्द्र दतिया की गद्दी पर बैठा। रामचन्द्र ने अनेक युद्ध लड़े और लड़ाई में घायल होने से उसकी मृत्यु हो गई। रामचन्द्र की मृत्यु के पश्चात रामसिंह गद्दी पर बैठे और रामसिंह के पश्चात उसका पौत्र इन्द्रजीत सिंहासन पर बैठा।

इन्द्रजीत ने अनेक युद्ध लड़े। सन् 1762 ई में उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत शत्रुजीत दतिया का राजा बना। शत्रुजीत के पश्चात सन् 1801 ई. उसका पुत्र राजा पारीछत दतिया का उत्तराधिकारी हुआ। राजा पारीछत के पश्चात भी दतिया में कई राजा बने। जिनमें भवानी सिंह और राजा गोविन्द सिंह आदि के नाम महत्वपूर्ण हैं। देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात दतिया भारत का अंग बन गया तथा 1 नवम्बर 1956 को राज्यों के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप दतिया को वर्तमान मध्य प्रदेश राज्य में मिला दिया गया।

दतिया के छतरियों के चित्रण

दतिया की कला में क्षेत्रीय कला की झांकी दिखाई पड़ती है, जिसका उदय और विकास समय-समय पर होता रहा है। बुन्देली चित्रकला में राजस्थानी, मारवाड़, मेवाड़, ढढूंर, हड़ौती कला को बुन्देलखण्ड के अलग-अलग क्षेत्रों में विषय वस्तु के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। सन् 1601 ई0 मे कविप्रिया, रसिकप्रिया की रचनाओं के आधार पर चित्रकारो ने व्यापक पैमाने पर उन पर आधारित चित्र बनाये। कछवाहा के राजा, राजा इन्द्रजीत के दरबारी कवि आचार्य केशव के साहित्य को चित्रकला का एक ऐसा वरदान मिला जिससे उनकी एक-एक पंक्ति चित्रों पर उभरने लगी।

कवि केशव के काव्य पर आधारित बुन्देली रागमाला चित्रकला के अंतर्गत दो शैलियों ने जन्म लिया। जिनमें एक तो स्त्रियों के 'सोलह श्रृंगार का अलंकरण' और दूसरा 'बारहमासी ऋतुओ के गीतों' का विषय प्रमुख है। सोलहवीं शताब्दी में चित्रकला का रूप बदल गया। तत्कालीन चित्रो मे जीवन का उत्साह व स्फूर्ति रंगो के बोध के साथ सौन्दर्यानुभूति को एक नये मोड़ पर ला दिया। जिस प्रकार महाकवि सूर और तुलसी ने साहित्य में जो प्रभाव पैदा किया वही चित्रकारो ने राम और कृष्ण की बाल-लीलाओ और क्रीड़ाओ को चित्र स्वरूप अंकित किया। मुगल कला में लौकिक विषय ही चित्रित हुये हैं, यही कारण है कि बुन्देली कला मध्यकालीन संस्कृति के विकास में एक कड़ी के रूप में कार्य करती है। यहाँ पर 'तैल-चित्रण पद्धति' के प्रादुर्भाव के पूर्व 'टेम्परा पद्धति' अन्य भित्ति-चित्रण के साथ एक लोकप्रिय पद्धति थी।

दतिया की चित्रकला इसका साक्षात प्रमाण है। यहाँ के चित्रकार ने बाहरी प्रेरणाओ को विदेशी कहकर छोड़ा नहीं वरन् उदार हृदय से अपनी शैली में प्रदर्शित किय। बुन्देली चित्रकला को

विभिन्न राजाओं ने राजकीय संरक्षण और अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर समृद्धशाली बनाया। मध्यकाल में बुन्देली कलम का एक स्वतन्त्र और नया रूप विकसित हुआ। बुन्देलखण्ड के शासक योद्धा, पराक्रमी, शूरवीर होने के साथ-साथ कलानुरागी और कला-संपोषक थे। जिनके संरक्षण में विकसित बुन्देली कलम और इण्डो-इस्लामिक स्थापत्य शैली ने भारतीय कला मे एक नये आयाम का सूत्रपात किया। इन बुन्देली शासकों के संरक्षण में पुष्पित-पल्लिवित कला के मुख्य केन्द्र के रूप में हम ओरछा और दतिया का विशेष उल्लेख कर सकते हैं।

दतिया चित्रकला में धार्मिक प्रभाव

दतिया के चित्रों का अध्यन करने पर ऐसा प्रतीत होता है, जैसे कि यहाँ पर निर्मित चित्र पड़ोसी राज्य ओरछा से प्रभावित थे। दतिया चित्रकला शैली में रामायण, महाभारत, भागवत पुराणों से संबन्धित धार्मिक चित्रों के अतिरिक्त स्थानीय राजाओं के जीवन से संबन्धित घटनाओं के चित्रण भी देखे जा सकते है।

मध्य भारत में बुंदेली चित्रकला की अपनी विशिष्टताएँ हैं, जो उन्हें अन्य क्षेत्र की चित्रकला से अलग बनाती हैं। बुंदेली चित्रकला के सबसे उत्तम प्रमाण ओरछा और दतिया में देखे जा सकते हैं। बुन्देलखण्ड में धार्मिक आस्थाओं और मान्यताओं का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। इस क्षेत्र में समय-समय पर विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायों का विकास और संरक्षण हुआ। जिसके अंतर्गत यहाँ पर धार्मिक सम्प्रदायो के रूप मे शैवमत, शक्ति उपासना, मातृपूजा, शक्तिवाद, जैन धर्म, बौद्धधर्म, भागवतधर्म, रामानुज सम्पद्राय इत्यादि प्रमुख थे।

बुन्देली शासको की वंशावली के अनुसार यहाँ पर बुंदेलों का शासन प्रथम शासक रुद्रप्रताप (1501 ई०-1531 ई०) से शुरू होता है। इसके बाद इनके उत्तराधिकारी भारती चन्द्र (1531 ई० से 1554 ई०) हुये, इनके पश्चात् बुन्देली शासन की बागडोर राजा मधुकरशाह बुन्देला (1554 ई० से 1592 ई०) के हाथो आयी। बुन्देला शासको में मधुकरशाह पहले राजा थे, जो कि वैष्णव धर्म के समर्थक थे। इनके ही समय में बुन्देली भित्ति चित्रो का विकास शुरू हुआ था। इसीलिए इनके समय में यहाँ के भित्ति चित्रो में 'वैष्णव धर्म' से संबन्धित चित्रों का अधिक चित्रण किया गया।

दतिया चित्रकला की पटल तैयार करने की विधी

चित्रकला के लिए पटल तैयार करना सबसे महत्वपूर्ण कार्य होता है। दतिया चित्रकला में चित्रों को निर्मित करने से पहले पटल को प्लास्टर के रूप में तैयार किया गया है। क्योकि किसी भी चित्र की गुणवत्ता और उसकी सुंदरता में चित्र पटल का महत्वपूर्ण योगदान होता हैं। इसलिए चित्र की लम्बी आयु के बहुत महत्वपूर्ण होता है, कि जिस जगह पर उसका चित्रण करना है, पहले उसे इस प्रकार तैयार किया जाये, कि उसपर निर्मित किए जाने वाले चित्र एक लंबे समय तक सुरक्षित रहें। भारतीय कला में भित्ति चित्रण पद्धति के इन प्रमाणों को अजन्ता, एलोरा, बाघ, बादामी, सिन्तनवासन आदि की गुफाओं में देखा जा सकता है।

अजंता में गुफा की खुरदुरी भित्ति पर चूने का पलस्तर चढ़ा कर टेम्परा शैली में रंगाकन किया गया है। यहाँ सर्वप्रथम रेखांकन किया गया है फिर स्थानीय रंगों को तैयार कर समतल रूप से भर कर गोलाई एवं उभार देने के लिए आसपास गहरे रंगों का प्रयोग किया गया है। काले,

सफेद तथा हिरोंजी रंगों से उत्तम आलेखन बने हे तथा लाल, नीले और पीले विरोधी रंगों का भी प्रयोग हुआ है।

जबकि बादामी गुफा का वर्ण विधान भी अजंता एवं बाघ गुफाओं के समान है किन्तु सिगरियां गुफा चित्रों की शैली अजंता के निकट होते हुए भी भिन्न है यहाँ गीली दीवार पर लाल अथवा काले रंग से रेखांकन करने के उपरांत रंग भरे गए है। इसके अतिरिक्त इस पद्धति का आंशिक प्रभाव जैन चित्र शैली और पाल चित्र शैली में भी देखा जा सकता है।

उपरोक्त के परिप्रेक्ष्य में यदि हम मध्य युगीन भारतीय कला के व्यापक पटल की समीक्षा करें तो उस युग में राजस्थानी, मुगल, पहाड़ी और बुन्देली चित्र शैलियों में भी भित्ति चित्रण परम्परा का इस विधि का अनुशीलन किया जाता रहा है। यद्यपि बौद्ध कालीन भित्ति चित्रो से इनकी रचना विधान में कुछ भिन्नतायें थीं। लेकिन इन सब ऐतिहासिक स्थलों पर चित्रण से पहले चित्रण के पटल को तैयार किया गया है। भारत में भित्ति चित्रों बुन्देली चित्रकला स्वतन्त्र रूप से विकसित चित्र शैली तो नहीं कही जा सकती, लेकिन इस शैली को राजपूत और मुगल शैलियों ने आधार प्रदान किया, जिसमें स्थानीय रीति-रिवाज, त्योहार, धार्मिक मान्यतायें, स्थानीय वेश-भूषा, आभूषण और अलंकरण जैसे तत्वों ने चित्रकारों को प्रेरित किया। जिनके संयोग और सामंजस्य से बुन्देली चित्रकला अपनी पहचान बना सकी।

चित्रकारी से पहले चित्रकार भूमि को प्लास्टर या वृजलेप से तैयार करते थे। शिल्प-शस्त्र में

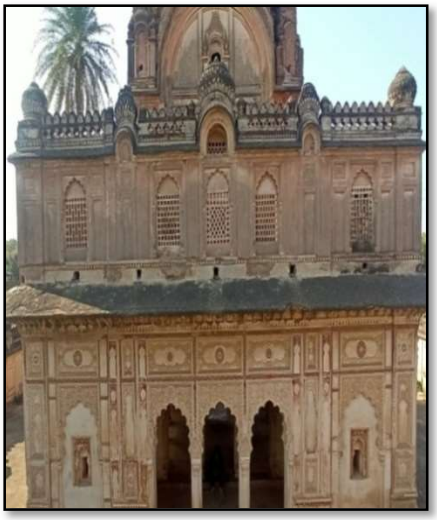

इसे 'भूमि बन्धनम' कहा गया है। बुंदेलखण्ड में इसे 'भीत' तैयार करना कहते है। प्लास्टर बनाने के लिए 'वृषभ चलित प्रस्तर चक्की' द्वारा वर्तुलाकार दो फीट गहरी नाली में दो दिन तक पीसा और घोंटा जाता था। इसको शक्तिशाली बनाने के लिए इसमें जो घटक मिलाये जाते थे, उनमें बेल का गूदा, लभेड़ा, कपिथ, उड़द की दाल का जल, तथा गुड़, इत्यादि, जिसे शिल्पी लोग ऋतु के अनुसार इस्तेमाल किया करते थे।

राजा परीक्षित की छत्री

दतिया में स्थित समस्त समाधियों या छतरियों में राजा पारीक्षत की छत्री सबसे सुद्रण अवस्था में है। यह छत्री 25'487" अक्षांश और 70'28'7" देशांतर पर दतिया में करण सागर तालाब के किनारे पर स्थित है। इस छत्री में दतिया राजवंश के दूसरे अन्य राजाओं की अपेक्षा अधिक चित्रकला के प्रमाण मिलते हैं। इस स्मारक का मुख्य प्रवेश द्वार पूरब मुखी है। इस स्मारक में

निर्मित चित्रों में बैगनी, नीला, आसमानी, हरा, लाल, कत्थई, कला, नारंगी रंग से चित्रों को चारों तरफ की दलानों, अंदर की दीवालों एवं गुम्बद के अंदर की छत में निर्मित किया गया है। सबसे ऊपर की किनारी पर गोपियों के साथ नृत्यरत कृष्ण पूरी पट्टी पर चित्रित किए गए हैं। ये अंकन बहुत ही मनोहारी है और इनका रंग बहुत ही धूमिल हो गया है। इस छतरी के चारों ओर दालानों में चित्र बनाए गए हैं।

पूर्वी दालान के चित्र– पूर्वी दालान में कृष्ण का गोपियों के साथ बैठना, कृष्ण का राधा का हाथ पकड़ कर नृत्य करना, कृष्ण का मटकी फोड़ना, शिव विवाह का दृश्य, राम दरबार का दृश्य, आदि का अंकन किया गया है। उत्तरी दालान में बलराम कौरव सेना युद्ध चित्रण किया गया है।

पश्चिमी दालान के चित्र - कृष्ण का गोवर्धन पर्वत को उठाना, दक्षिणी दालान के चित्र कृष्ण का गोपियों के वस्त्र चुराना एक सीख, कृष्ण का कदंब के वृक्ष नीचे बांसुरी बजाना, कृष्ण बलराम का मल्लयुद्ध, आदि। इसके अलावा अन्दर की दीवाल पर भी चित्रों को उकेरा गया है। जिसमें शिव-उमा का चित्रण, राधा कृष्ण का चित्रण, गोपियों का होली खेलना, चार भुजाधारी गणेश जी का चित्रण, इसके सामने सरस्वती को अपने वाहन हंस पर वीणा के साथ दिखाया गया है। इस चित्रण के दायीं तरफ राजा परीक्षित के दरबार का चित्रण किया गया है, जिसमें राजा को अपने दरबार में अपने मंत्रियों के साथ दरबार में बैठे हुये दिखाया गया है। ठीक इसके बायीं तरफ राजा परीक्षित के राजमहल का चित्रण भी किया गया है।

विजय बहादुर की छतरी

यह छत्री 25’40”7” अक्षांश और 78’28’7” देशांतर पर दतिया में करण सागर तालाब के किनारे पर राजा परीक्षित की छत्री के दक्षिण में स्थित है। महाराजा परीछत के निःसंतान होने के कारण उन्होने कुंवर विजय बहादुर को गोद लिया था। जिन्होने सन् 1839 ई. से सन् 1857 ई. तक शासन किया। उनके पश्चात महाराजा भवानी सिंह उनके उत्तराधिकारी हुए, जिन्होने इस छतरी का निर्माण कराया।

यह छतरी वर्गाकार प्रांगण में बनी है। छतरी की बाहरी दीवारों पर विभिन्न प्रकार के बेलवूटे का अलंकरण है। अलंकरणों के साथ-साथ हाथी, घोड़े, अंग्रेज, वांसुरी बजाते कृष्ण, पहलवान, घुड़सवार, साधु, हनुमान व शेर के हैं। समाधि के ऊपरी भाग में अष्टकोणीय स्थापत्य के बीच वृत्ताकार परिधि में अंकन किया गया है। वृत्त के चारों ओर कृष्ण व गोपियों को एक-दूसरे के हाथ पकड़ कर नृत्य करते हुए चित्रित किया गया है। सभी के चेहरे एक चश्म बनाए गए हैं। कृष्ण को मुकुट पहने दिखाया गया है। उनकी वेशभूषा प्रत्येक आकृति में अलग-अलग है। सभी आकृतियों में बुन्देलखण्डी पटका स्पष्ट दिखाई देता है।

महाराजा भवानी सिंह की छतरी

महाराजा भवानी सिंह के पुत्र महाराजा गोविंद सिंह ने उनकी स्मृति में एक छतरी का निर्माण करवाया था। छतरी के प्रवेश द्वार के दोनों ओर बने हुए विभिन्न बेलबूटों के अल्पनाओं से अलंकृत है। बीच के प्रवेश द्वार के ऊपर वाली वर्गाकार भित्ति पर दो हाथियों को सूड़ उठाए चित्रित किया गया है। छतरी के पीछे की भित्ति पर भी एक सुन्दर अंकन किया गया है। जिसमें दो हाथी आमने-सामने खड़े चित्रित किए गए हैं। उनका एक पंाव मगर के जबड़े में है। बीच मे एक वृत्त बना हुआ है। वर्गाकार आकारों के ऊपर एक लम्बी पट्टी आकल्पनाओं की बनी है। जिनमें भगवान गणेश, मराठा सरदार, शेर व हाथी के चित्र अंकित हैं।

ऊपर की ओर बड़े वृत्त के बाहरी घेरे में नृत्यरत कृष्ण व गोपियों का अंकन किया गया है। उसके नीचे की ओर एक साधु की धुमिल आकृति है तथा उसके पाश्र्व में एक वृक्ष है जिसके ऊपर सारस अंकित किए गए हैं। इनके अलावा मयूर व अन्य पक्षियों का भी अंकन किया गया है। इसके अलावा एक स्थान पर गदा उठाए मुकुटधारी हनुमान का भी अंकन किया गया है। एक कोने पर भगवान शंकर जिनकी जटा से गंगा निकलते हुए अंकित है।

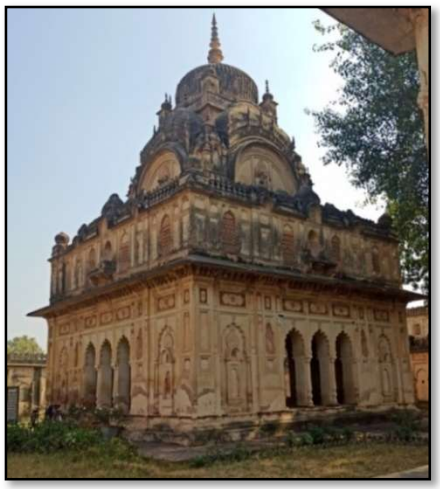

उनके साथ एक घुड़सवार को भी अंकित किया गया है। इसके अलावा इस स्थान पर भगवान राव राजा पारीछत, शत्रुजीत और गोविन्द सिंह आदि राजाओं की समाधियाँ बनी हुई हैं। इन छतरियों में अब देख-रेख के अभाव में चित्रकला के नमूने देखने को नहीं मिलते हैं।

निष्कर्ष

दतिया की सम्पूर्ण छतरियों का अध्ययन करने के पश्चात यह निष्कर्ष निकलता है कि सम्पूर्ण छतरियों में राधा-कृष्ण, शिव, राम, हनुमान आदि देवी - देवताओं का चित्रण बुंदेली शैली में किया गया है। बुंदेली शैली की विशेषता है कि यहाँ पर चित्रों में रंग सरल, सपाट व चमकदार लगाए गए हैं। यहाँ के भित्तिचित्रों में भावों को अधिक महत्व दिया गया है। इस शैली में नायक-नायिकाओं का अंकन सामान्य मनुष्य के रूप में न बनाकर कृष्ण और राधा के रूप में दिखाया गया है। चेहरे एक चश्म, माथा छोटा और धंसा हुआ तथा नाक और माथा एक ही सपाट प्रभावपूर्ण रेखा से बनाये गए हैं। चित्रों में उर्दू लिपि से नाम लिखा गया है। दतिया के चित्रों में मुगल व राजस्थानी शैली का समन्वय देखने को मिलाता है। इन चित्रों में विधान तथा रंग भित्तिचित्रों के विधान जैसे सरल व सपाट हैं।

सन्दर्भ –

1. डॉ॰ काशी प्रसाद त्रिपाठी, ओरछा राज्य (इतिहास एवं विरासत) लीला प्रकाशन, नई दिल्ली,(2020) पृ.23-30

2. बुन्देलखण्ड के भित्तिचित्र डॉ॰ भट्ट,शुभेश, -----बुंदेलखण्ड की चित्र-साधन, खण्ड-3, जनक शिल्प दीर्घा, वीर बुंदेलखंड प्रेस झाँसी (1981), पृ॰6।

3.चुन्नू शिल्पी, जन्म 1899 ई॰ भदौरिया की खिड़की, दतिया के शोध छात्र का साक्षात्कार।

4. विष्णुधर्मोत्तर पुराण--तृतीय खण्ड, अध्याय-4, गीता प्रेस गोरखपुर, (1998), पृ.138।

5. के॰वी॰एल॰पाण्डेय----दतिया उद्भव और विकास, श्री श्यामसुंदर "श्यामला" जन सहायता और सामुदायिक विकास संस्थान, प्रबंधक सम्पादक, बाबूलाल गोस्वामी, (1981) पृ.2

6. डॉ.रीता प्रताप-भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, (2019) पृ.93।

7. डॉ॰ कुमकुम माथुर एवं दिव्य खरे,-----मयथोलोजिकल मिनिएचर पेंटिंग ऑफ ओरछा-दतिया 17-18 सेंचुरी, इंटेरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस रिसर्च अँड देवलोपमेंट(2018) पृ.410-412

8. डॉ .रामनाथ मिश्र (1973),------"मध्यकालीन भारतीय कलायें एवं उनका विकास",राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर पृ.9।

9. प्रेमशंकर द्विवेदी----भारतीय भित्तीय चित्रकला,कला प्रकाशन, बी.एच.यू,वाराणसी-5,प्रथम संस्करण-2010,पृ.30।

10. वाचस्पति गैरोला------"भारतीय चित्रकला" मित्र प्रकाशन उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी इलाहाबाद (1963), पृ.228।

11. नर्मदा प्रसाद उपाध्याय-----"बुन्देलखण्ड के भित्तिचित्र" मध्य प्रदेश जनजातीय संग्रहालय, श्यामला हिल्स, भोपाल, मध्य प्रदेश (2021)

12. शोधार्थी द्वारा सर्वेक्षण के दौरान प्राप्त जानकारी के आधार पर, सर्वेक्षण तिथि 08/12/2020

13. प्रेम चन्द्र गोस्वामी,----भारतीय कला के विविध स्वरूप, प्रथम संस्करण-,पंचशील प्रकाशन, जयपुर,(1997) पृ.16-20।

14. MADHU SAXENA------BUNDELKHAND PAINTING, Sharda Publishing House Delhi (2004),P.111

15. डॉ अविनाश बहादुर वर्मा ---- भारतीय चित्रकला का इतिहास, राज प्रिंटर्स मेरठ, (2020),पृ.210-211